जीव-जंतुओं की रंगीन दुनिया

नरेंद्र देवांगन

रंग की प्रयोजन सम्बंधी खोज हमें यह बताती है कि यद्यपि प्राणियों में रंग का होना अनिवार्य नहीं है फिर भी हमारे चारों ओर रंगीन जंतुओं का भारी जमघट है। एक मत यह है कि जंतुओं के अद्‌भुत रंग इनकी सुरक्षा से सम्बंधित हैं। परंतु यह निष्कर्ष सब प्राणियों पर लागू नहीं होता। कुछ जंतुओं में रंग अनुवांशिक रूप से अनिवार्य रहता है। उसका न किसी बाह्य वातावरण से सम्बंध है और न सुरक्षा से।

उदाहरण के लिए कोन-शेल को लीजिए। इसके कवच की बाहरी सतह पर रंग का एक निश्चित पैटर्न रहता है। जब तक प्राणी जीवित रहता है यह पैटर्न दिखाई नहीं देता, क्योंकि यह बाह्य त्वचा की एक मोटी परत से ढंका रहता है। मृत्यु के पश्चात त्वचा सड़ जाने पर यह रंगीन पैटर्न दिखाई देने लगता है। जीवित प्राणी का रंग इस छिपे हुए पैटर्न से कहीं अलग है। सी-एनीमोन नामक प्राणी भी विभिन्न रंगों के होते हैं। परंतु कोई नहीं जानता कि इतने सुंदर रंग उन्होंने कहां से पाए।

ग्रांट ऐलन ने अपनी पुस्तक 'कलर सेंस'में लिखा है कि वे जंतु, जो सुंदर फल और फूल इत्यादि पर रहते हैं, प्रायः सुंदर हो जाते हैं और मांसाहारी जंतु, जो सदा मिट्‌टी में अथवा गंदी जगह रहते हैं, रंगीन नहीं होते। यह सत्य है कि प्रायः जंतु के रंगों पर वातावरण का प्रभाव पड़ता है, परंतु इसे एक सिद्धांत का रूप नहीं दिया जा सकता। कीचड़ में पाए जाने वाले घोंघों के कवच का रंग प्रायः सुंदर होता है। गंदे वातावरण में ही रहने वाली कुछ मकड़ियां बड़ी सुंदर होती हैं।

प्रकृति ने इंद्रधनुष के सारे रंगों को लेकर उनके भड़कीले मिश्रण से पशु-पक्षियों को इस प्रकार सुसज्जित कर दिया है कि उन्हें देख हम अवाक रह जाते हैं। मोर तथा पैरेडाइज़ बर्ड रमणीक रंगों के उदाहरण हैं, परंतु गौरैया तथा कुछ अन्य पक्षी साल भर भूरे रंग के ही रहते हैं। यह रंगभेद क्यों? रंग रमणीयता आती क्यों है? प्रकृति ने जंतुओं को सुंदर भड़कीले रंग दिए ही क्यों? ये प्रश्न ऐसे हैं जिनको सुलझाने का जितना प्रयास किया जाता है वे उतने ही उलझते जाते हैं।

आकर्षक रंजन

मैन्टिस नामक कुछ जंतु हैं जिनके शरीर की बनावट सुंदर फूलों से मिलती-जुलती है। भारतीय मैन्टिस इसका महत्वपूर्ण उदाहरण है। इसके शरीर का रंग गुलाबी होता है। टांगें चपटी हो जाती हैं, इसलिए फूलों की पंखुड़ियों जैसी लगती हैं। यह अपना सिर झुकाकर इस तरह बैठता है कि उधर आने वाले प्राणी को किसी जानवर की उपस्थिति का भान तक नहीं होता। परंतु कोई कीड़ा इसके निकट आया नहीं कि इसकी अगली टांगों में फंस जाता है। इसकी अगली टांगें भी विशेष रूप लिए होती हैं। वे लंबी होती हैं और उनका अगला भाग पीछे वाले भाग पर मुड़कर खटकेदार चाकू की धार जैसा घातक फंदा बना लेता है। इस धार के किनारे दांतेदार होते हैं, जिससे कोई प्राणी एक बार फंस जाने पर इस फंदे से निकल नहीं सकता। तितली तथा उसके अन्य सम्बंधी इसको फल समझकर मधु के प्रलोभन में इसके निकट आते हैं और फंदे में फंस जाते हैं।

श्रीलंका की एक मकड़ी पत्ती पर रेशम का ऐसा जाल बुनती है जो पक्षियों के उत्सर्जित पदार्थ के रूप-रंग का होता है। इसके बीच बैठी हुई मकड़ी उत्सर्जित पदार्थ का गहरा धब्बा मालूम पड़ती है। तितलियां या कीड़े-मकोड़े इसे उत्सर्जित पदार्थ समझकर वहां नमी की खोज में आते हैं और आते ही मकड़ी के शिकार हो जाते हैं।

रंग परिवर्तन

कुछ जानवरों में रंग बदलने की क्षमता होती है। वे बड़ी तेज़ी से रंग बदल सकते हैं। रंग या तो प्रकाश किरणों से बदलते हैं या रंजक द्वारा। मोर के पंखों के बदलते रंगों का अनुभव सभी ने किया होगा। एक क्षण वह हरा रहता है, दूसरे क्षण नीला और उसके पश्चात ताम्र वर्ण का दिखाई पड़ता है। मोर में निश्चित रंग एक ही है, केवल उस पर पड़ने वाली प्रकाश किरणों का विच्छेदन भिन्न-भिन्न रंगों की झलक दिखाता है।

वर्णक

हर प्रकार के रंग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दो प्रकार के द्रव्यों से उत्पन्न होते हैं। एक है मिलेनिन वर्णक और दूसरा है वसारंजक। मिलेनिन रक्त से उत्पन्न होता है। यह उत्सर्जी पदार्थ है, किंतु अन्य उत्सर्जी पदार्थों की तरह बाहर न निकलकर त्वचा, बाल, पंखों और शल्कों में एकत्र हो जाता है। मिलेनिन वर्णक कई प्रकार के होते हैं, परंतु इनमें गाढ़े भूरे और काले रंग वाले वर्णक अधिक प्रत्यक्ष होते हैं।

पीले और लाल रंग के वर्णक वसारंजक कहलाते हैं। ये वसा के वर्णक हैं और शरीर के संचित द्रव्य से उत्पन्न होते हैं। कुछ ऐसे जंतु हैं जिनके रंग खाए गए पदार्थ के रंग पर आधारित होते हैं। इन रंगों को व्युत्पन्न वर्णक कहते हैं। तितलियों की इल्ली के रंग इसी तरह के होते हैं।

कोई भी प्राणी अपने शरीर को रमणीक वर्णों से सजाकर शत्रुओं की आंखों से नहीं बच सकता, परंतु हल्के रंग वाले प्राणी शिकारी जानवरों से बच निकलते हैं। इस तथ्य का ज्ञान सबसे पहले डार्विन को हुआ था, किंतु इस तथ्य को पूर्णतः प्रमाणित और सिद्ध करने का काम प्रोफेसर पल्टन ने किया। इसी के फलस्वरूप आज हम रंग की कई श्रेणियों से परिचित हैं। इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण श्रेणियां हैं संरक्षी रंजन, अपसूचक रंजन, अनुहरण और गौण लैंगिक लक्षणों से सम्बंधित रंग।

संरक्षी रंजन

संरक्षी रंजन के सैकड़ों उदाहरण दिए जा सकते हैं, परंतु इस संदर्भ में तीतर अथवा जंगली बतख का उदाहरण विशिष्ट है। जब ये पूर्णतया गतिहीन बैठे होते हैं तो दिखलाई नहीं पड़ते। इन पक्षियों में वैयक्तिक पंखों का पैटर्न किसी प्रकार से नकल नहीं है, क्योंकि हर प्रजाति का अपना पृथक नमूना होता है। परंतु व्यापक आभास एक ही प्रकार का प्रतीत होता है और वह है अदृश्यता का आवरण। तितलियों या पतंगों के पंखों का रंग एक ही समय संरक्षी तथा भड़कीला दोनों होता है। जैसे भारत की प्रसिद्ध तितली कैलीमा को लीजिए। यह ऐसा महत्वपूर्ण प्राणी है जो आंख झपकते ही रंग बदल लेता है। उड़ते समय इसके विस्तृत पंख नीले रंग के रहते हैं, जिस पर एक सुनहरी पट्टी सुशोभित रहती है। यदि इसका पीछा किया जाए तो यह अचानक अदृश्य हो जाती है, मानो हवा हो गई। अचंभा होता है कि हुआ क्या और क्यों? जिस झाड़ी के निकट यह विलीन हुई प्रतीत होती है उसके पास ध्यान से देखने पर थोड़ी देर में कोई एक पत्ती किनारे पर फटती हुई लगेगी। देखते-देखते उसके दोनों किनारे अलग हो जाएंगे और बीच से गहरा नीला रंग दिखाई देने लगेगा।

इस तितली के पंख के नीचे का रंग सूखी पत्ती के रंग से बिल्कुल मिलता-जुलता है। साम्य इतना है कि यह विशेषज्ञों को भी उलझन में डाल देता है। वैसी ही मध्य शिरा और वैसा ही शिरा विन्यास भी होता है। यहां तक कि मध्य भाग में कुछ धब्बे भी दिखाई पड़ते हैं, जो पत्तियों पर उपस्थित फफूंदों के धब्बों से मिलते हैं। नीचे

की ओर बढ़कर मध्य शिरा पत्ती के डंठल का रूप धारण कर लेती है और जब तितली पौधे पर बैठती है तो लगता है कि पत्ती टहनी से निकल रही है।

कुछ पक्षियों में संरक्षी रंजन शरीर के विशेष आसनों से सम्बंधित प्रतीत होते हैं। प्रायः भय की आशंका से ये पक्षी ऐसा आसन ग्रहण कर लेते हैं जिससे ये शत्रु को दिखाई न दें। इससे यह भी सिद्ध होता है कि ये अपने शरीर के रंग के परिणाम के प्रति सचेत हैं। बिटर्न नामक पक्षी भय का संकेत पाते ही अपनी चोंच को आकाश की ओर उठाए अपने शरीर को ऊर्ध्वाधर दिशा में इस तरह स्थिर करके खड़ा हो जाता है कि उसके नीचे का भाग शत्रु की ओर रहे। इसके शरीर के नीचे के भाग का रंग हल्का पीला होता है और गर्दन तथा सीने पर काली, खड़ी रेखाएं होती हैं। दूर से इसका रंग सरकंडे की शाखाओं के बची से झांकती हुई प्रकाश की किरणों जैसा हो जाता है। नतीजा यह होता है कि यह शत्रु की दृष्टि से ओझल हो जाता है।

रंग और बाह्य वातावरण की अनुरूपता केवल संयोग ही नहीं है। यह अन्य अनेक उदाहरणों द्वारा सिद्ध होता है। उष्ण कटिबंधीय वनों में रहने वाले हिरन का वर्ण पूरे वर्ष धब्बेदार बना रहता है, परंतु साधारण जंगलों में रहने वाले हिरनों का रंग गर्मी में धब्बेदार और शीतकाल में साधारण का रंग का होता है।

गिरगिट की रंग बदलने वाली आदत से सभी परिचित हैं। देखते-देखते इसके सिर का रंग लाल हो जाता है। कुछ स्क्विड, ऑक्टोपस और उष्ण प्रदेशीय मछलियां रंग बदलने में बड़ी प्रवीण होती हैं। बरमुडा के सागर में नैसा समुदाय की मछलियों में एक मछली ऐसी होती है जिसका रंग हल्का काला (जस्ते के रंग जैसा) होता है। कुछ क्षणों में ही इसका शरीर काली धारियों से युक्त हो जाता है। इन धारियों के बीच संगमरमर जैसी चमकती हुई सफेद धारियां रहती हैं। अनेक उष्ण प्रदेशीय मछलियां भी ऐसे ही रंग बदला करती हैं। प्रयोगशाला में भी इनके बदलते हुए रंग देखे जा सकते हैं।

इन सब जानवरों में वर्णक कणिकायुक्त कोशिकाएं त्वचा की बाहरी सतह के एकदम नीचे रहती हैं। प्रत्येक वर्णक कणिका झिल्ली की थैली में भरी रंग की नन्हीं-नन्ही बूंदों की बनी होती है। झिल्ली की इन थैलियों पर तंत्रिका तथा मांसपेशियों का जाल फैला रहता है। आंखों पर पड़ने वाला प्रकाश इन थैलियों को उत्तेजित करता है। प्रकाश यदि तेज़ होता है, तो उसका प्रभाव गहरी लाल एवं नीली थैलियों पर पड़ता है और यदि कम तेज़ होता है, तो उसका प्रभाव हल्के रंग की थैलियों पर पड़ता है। इसके प्रभाव से मांसपेशियां सिकुड़ती हैं और वर्णक कण से रंग निकलकर एक परत बना लेता है। इस प्रकार पता चलता है कि रंग बदलने का कारण आंखों पर पड़ने वाला प्रकाश है। अंधी मछलियों के शरीर का रंग परिवर्तित नहीं होता।

अपसूचक रंजन

कुछ रंग शत्रुओं को चेतावनी देने के लिए उत्पन्न होते हैं। ये शत्रु को बताते हैं कि अमुक रंग वाले प्राणी बेस्वाद हैं या ज़हरीले। शत्रु जंतु एक या दो बार अनुभव करके समझ लेते हैं कि कौन से विशेष रंग वाले कीड़े खाने योग्य नहीं हैंे। मुर्गियों के सामने संरक्षी रंगों वाले और अपसूचक रंग वाले बहुत से डिंभ डाल दीजिए, वे काले-पीले अपसूचक रंग वाले डिंभों को छोड़कर बाकी सब खा डालेंगी। संरक्षणीय रंजन के बिल्कुल विपरीत अपसूचक रंजक इस बात की चेतावनी देते रहते हैं कि अमुक रंग वाले जानवरों से दूर रहो। उत्तरी अमेरिका का स्तनपायी जंतु स्कंक, लाल पेट वाला टोड आदि रीढ़धारी प्राणी हैं, जो अपनी रक्षा के लिए रंजन का प्रयोग करते हैं।

अनुकरण

अनुकरण का तात्पर्य एक प्रजाति की दूसरे से संरक्षीय समरूपता है। साधारण खाई जाने वाली स्वादिष्ट प्रजातियां अपनी रक्षा के लिए डंक मारने वाली अथवा बेस्वाद जाति का अनुकरण करती हैं। उदाहरण के लिए वायसराय तितली कुस्वाद मोनार्क तितली का अनुकरण करती है। कुछ पतंगें भृंगों का और कुछ मक्खियां बर्र की

विभिन्न प्रजातियों के रंगों का अनुकरण करती हैं। कुछ केवल रंजकों की नकल ही नहीं करती, बल्कि उन्हीं की भांति फूलों पर मंडराती हैं।

गौण लैंगिक लक्षण

नर और मादा के रंजकों में प्रायः अंतर पाया जाता है। पक्षियों में यह अंतर बहुत स्पष्ट होता है। इनमें नर मादा से अधिक भड़कीले रंग का होता है।

मुर्गी के सिर पर सुंदर लाल कलगी होती है, जो मादा के सिर पर नहीं होती। नर का रंग मादा की अपेक्षा भड़कीला होता है। नर टर्की के गले में चमड़े की एक लाल थैली लटकने लगती है। नर मोर सुंदर रंगों की छटा प्रदर्शित करता है। पैरेडाइज़ बर्ड का नर अद्वितीय सुंदरता के लिए प्रसिद्ध है। स्टिकल बैक नामक मछली के नर का पेट प्रजनन काल में लाल हो जाता है। प्रकृति के नियम के अनुसार नरों के लिए प्रतिद्वंद्विता में सफल होने के लिए सुंदर होना आवश्यक है। सुंदरता के साधनों में सबसे महत्वपूर्ण हैं रंग। ***(स्रोत फीचर्स)***